[2021] 2 उम. नि. प. 103

राहना जलाल

बनाम

केरल राज्य और एक अन्य

17 दिसम्बर, 2020

[2020 की दांडिक अपील सं. 883]

न्यायमूर्ति डा. धनंजय वाई. चंद्रचूड़, न्यायमूर्ति इंदू मल्होत्रा और न्यायमूर्ति इंदिरा बनर्जी

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) – धारा 438 [सपठित मुस्लिम स्त्री (विवाह अधिकार संरक्षण) अधिनियम, 2019 की धारा 3, 4 और 7(ग) तथा दंड संहिता, 1860 की धारा 498-क/34] – अग्रिम जमानत – मुस्लिम पुरुष द्वारा अपनी पत्नी पर तीन तलाक का उच्चारण करके विवाह-विच्छेद किया जाना – पत्नी द्वारा पति और सास (अपीलार्थी) के विरुद्ध प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज किया जाना – अभियुक्तों द्वारा गिरफ्तारी की आशंका को देखते हुए अग्रिम जमानत के लिए आवेदन फाइल किया जाना – आवेदन खारिज हो जाना – तीन तलाक के अपराध के लिए दायी व्यक्ति – चूंकि तीन तलाक का अपराध केवल मुस्लिम पुरुष द्वारा ही किया जा सकता है इसलिए सास-अपीलार्थी को मुस्लिम स्त्री अधिनियम के अधीन अभियुक्त नहीं बनाया जा सकता है और दंड संहिता की धारा 498-क के अधीन अभिकथन अस्पष्ट और साधारण प्रकृति के होने के कारण अपीलार्थी को अग्रिम जमानत का फायदा देना न्यायोचित होगा ।

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 – धारा 438 [सपठित मुस्लिम स्त्री (विवाह अधिकार संरक्षण) अधिनियम, 2019 की धारा 3, 4 और 7(ग) तथा दंड संहिता, 1860 की धारा 498-क/34] – अग्रिम जमानत – मुस्लिम पुरुष द्वारा अपनी पत्नी पर तीन तलाक का उच्चारण करके विवाह-विच्छेद किया जाना – पत्नी द्वारा पति और सास (अपीलार्थी) के विरुद्ध प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज किया जाना – अभियुक्तों द्वारा

गिरफ्तारी की आशंका को देखते हुए अग्रिम जमानत के लिए आवेदन फाइल किया जाना – आवेदन खारिज हो जाना – अधिनियम के अधीन अग्रिम जमानत मंजूर की जा सकती है या नहीं – तीन तलाक के मामले में अधिनियम के अधीन गिरफ्तारी की आशंका करने वाले व्यक्ति को अग्रिम जमानत मंजूर की जा सकती है किन्तु शर्त यह है कि सक्षम न्यायालय द्वारा ऐसी जमानत मंजूर करने से पूर्व उस विवाहित मुस्लिम स्त्री को अवश्य सुना जाना चाहिए जिस पर तीन तलाक का उच्चारण किया गया है और न्यायालय का समाधान हो जाने पर ही अभियुक्त को अग्रिम जमानत मंजूर की जा सकती है ।

इस अपील के तथ्य इस प्रकार हैं कि अपीलार्थी के पुत्र और द्वितीय प्रत्यर्थी के बीच विवाह हुआ था । द्वितीय प्रत्यर्थी ने भारतीय दंड संहिता की धारा 498-क/34 और मुस्लिम स्त्री (अधिकार संरक्षण) अधिनियम, 2019 के अधीन यह अभिकथन करते हुए पुलिस थाने में एक प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज की कि अपीलार्थी-सास के पुत्र (द्वितीय प्रत्यर्थी के पति) ने उनके मकान पर तीन तलाक का उच्चारण करके विवाह-विच्छेद कर दिया और दूसरा विवाह कर लिया । दोनों अभियुक्तों द्वारा गिरफ्तारी की आशंका को देखते हुए अग्रिम जमानत के लिए उच्च न्यायालय में समावेदन किया गया । उच्च न्यायालय ने जमानत के आवेदन को खारिज कर दिया । उच्च न्यायालय के आदेश में जमानत को इनकार करने के लिए कोई कारण नहीं दिया गया । अभियुक्तों ने उच्च न्यायालय के आदेश से व्यथित होकर उच्चतम न्यायालय में, अपील के लिए विशेष इजाजत याचिका फाइल की गई । प्रथम याची (अपीलार्थी के पुत्र) की ओर से फाइल की गई याचिका को ग्रहण नहीं किया गया और उसे सक्षम अधिकारिता वाले न्यायालय के समक्ष अभ्यर्पण करने और नियमित जमानत के लिए आवेदन करने का समय दिया गया । तथापि, उच्चतम न्यायालय द्वारा द्वितीय याची-अपीलार्थी की अपील को मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – मुस्लिम स्त्री (विवाह अधिकार संरक्षण), अधिनियम, 2019 की धारा 7 एक सर्वोपरि खंड से आरंभ होती है, जो दंड प्रक्रिया संहिता में "किसी बात के होते हुए भी" शब्दों से प्रवर्तित होती है ।

तथापि, इस बात पर बल देने के लिए समान रूप से यह भी आवश्यक है कि सर्वोपरि खंड केवल खंड (क), (ख) और (ग) के अंतर्गत आने वाले क्षेत्र में प्रवर्तित होता है । खंड (क) के अधीन, अपराध संज्ञेय है यदि अपराध के कारित होने की जानकारी पुलिस थाने के भारसाधक अधिकारी को विवाहित मुस्लिम स्त्री या रक्त अथवा विवाह से संबंधित किसी व्यक्ति द्वारा दी जाती है । खंड (ख) के अधीन, अपराध विवाहित मुस्लिम स्त्री, जिस पर तलाक का उच्चारण किया गया है, की प्रेरणा पर शमनीय है । तथापि, खंड (ख) में मजिस्ट्रेट की अनुज्ञा आवश्यक है । मजिस्ट्रेट शमन करने के लिए निबंधनों और शर्तों को विनिर्दिष्ट कर सकता है । आरंभत:, खंड (ग) "इस अधिनियम के अधीन दंडनीय अपराध के अभियुक्त व्यक्ति को जमानत पर नहीं छोड़ा जाएगा" शब्दों से शुरु होती है । किंतु इसके पश्चात् क्या है वह भी समान रूप से आवश्यक है क्योंकि इससे पहले जो कहा गया है उस पर शर्तें लगाई गई हैं । दो शर्तें हैं । उनमें से एक प्रक्रियात्मक है जबकि दूसरी सारभूत है । पहली शर्त यह है कि मुस्लिम स्त्री, जिस पर तलाक का उच्चारण किया गया है, उसको सुना जाना आवश्यक है । पश्चात्वर्ती में न्यायालय को अपना यह समाधान किया जाना आवश्यक है कि उस व्यक्ति को जमानत मंजूर करने के लिए युक्तियुक्त आधार है । यह सारभूत शर्त उस बात की केवल एक मान्यता है जो जमानत मंजूर करने के लिए न्यायिक शक्ति में विवक्षित है । कोई न्यायालय तब तक जमानत मंजूर नहीं करेगा जब तक कि जमानत मंजूर करने के लिए युक्तियुक्त आधार न हों । सभी न्यायिक विवेकाधिकार का प्रयोग युक्तियुक्त आधारों पर किया जाना चाहिए । इसलिए खंड (ग) में की सारभूत शर्त न्यायालय को जमानत मंजूर करने की अपनी शक्ति से वंचित नहीं करती है । संसद् ने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 438 के उपबंधों को अध्यारोहित नहीं किया है । धारा 7(ग) या अधिनियम में कहीं भी ऐसा कोई विनिर्दिष्ट उपबंध नहीं है जो धारा 438 को अधिनियम के अधीन दंडनीय अपराध के लिए अप्रयोज्य बनाता हो । न्यायालय की जमानत मंजूर करने की शक्ति सभी मामलों में निर्दोषिता की उपधारणा करने (जहां अभी विचारण और दोषसिद्धि की जानी है) और दैहिक स्वतंत्रता के महत्व की

मान्यता है । स्वतंत्रता को, निस्संदेह, विधि द्वारा विनियमित किया जा सकता है जो अनुच्छेद 21 के अधीन सारभूत रूप से और प्रक्रियात्मक रूप से उचित, न्यायसंगत और युक्तियुक्त हो । उपरोक्त कारणों से, न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचा है कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 438 और अधिनियम की धारा 7(ग) का सही और सामजंस्यपूर्ण अर्थान्वयन करने पर अधिनियम के अधीन कारित किए गए अपराध के लिए अग्रिम जमानत मंजूर करने पर कोई वर्जन नहीं है परंतु सक्षम न्यायालय द्वारा विवाहित मुस्लिम स्त्री को, जिसने अग्रिम जमानत मंजूर करने से पूर्व शिकायत की थी, अवश्य सुना जाना चाहिए और विवाहित मुस्लिम स्त्री को सूचना जारी करने के पश्चात् अग्रिम जमानत के लिए आवेदन के लंबित रहने के दौरान अभियुक्त को अंतरिम राहत मंजूर करना न्यायालय का विवेकाधिकार होगा । इस न्यायालय के तारीख 3 दिसम्बर, 2020 के आदेश द्वारा अपीलार्थी को गिरफ्तारी से अंतरिम संरक्षण प्रदान किया गया था । प्राथमिक अभिकथन, जिस पर अग्रिम जमानत से इनकार करने के लिए बल दिया गया है, द्वितीय प्रत्यर्थी के पति द्वारा तीन तलाक का उच्चारण करने का है । इस न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया है कि अधिनियम के अधीन अपराध मुस्लिम पुरुष, जिसने अपनी पत्नी पर तलाक का उच्चारण किया था, द्वारा किया गया था न कि अपीलार्थी द्वारा जो कि द्वितीय प्रत्यर्थी की सास है । यद्यपि, केरल राज्य की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल श्री जी. प्रकाश ने जमानत मंजूर करने का विरोध करने के लिए दंड संहिता की धारा 498-क के अधीन अभिकथनों का उल्लेख किया, तो भी न्यायालय का यह मत है कि प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में इन अभिकथनों की ब्यौरों से रहित, अस्पष्ट और साधारण प्रकृति को ध्यान में रखते हुए अपीलार्थी (जिसके पुत्र का द्वितीय प्रत्यर्थी के साथ दाम्पत्य संबंध है) को अग्रिम जमानत मंजूर करने के फायदे से इनकार नहीं किया जाना चाहिए । यह भी उल्लेख किया जाना आवश्यक है कि न्यायिक मजिस्ट्रेट, प्रथम श्रेणी-1, उत्तर पारुर ने तारीख 23 अक्तूबर, 2020 के आदेश द्वारा घरेलू हिंसा के स्त्रियों का संरक्षण अधिनियम, 2005 की धारा 23 के अधीन द्वितीय प्रत्यर्थी के आवेदन का विनिश्चय

करते हुए अपीलार्थी के विरुद्ध अभिकथनों में कोई सार नहीं पाया था । तद्नुसार, न्यायालय यह आदेश और निदेश देता है कि अपीलार्थी को गिरफ्तार करने की दशा में उसे सक्षम न्यायालय द्वारा, उसके द्वारा 25,000/- रुपए का स्वीय बंधपत्र फाइल करने के अध्यधीन, जमानत पर छोड़ दिया जाएगा । (पैरा 10, 18, 19 और 20)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2020]	(2020) 4 एस. सी. सी. 727 : **पृथ्वी राज चौहान** बनाम **भारत संघ और अन्य** ;	15,17
[2019]	2019 का जमानत आवेदन सं. 9163, तारीख 3 अगस्त, 2020 को विनिश्चित : **नहास** बनाम **केरल राज्य** ;	6
[2017]	(2017) 9 एस. सी. सी. 1 : **शायरा बानो** बनाम **भारत संघ** ;	8
[2014]	(2014) 4 एस. सी. सी. 453 : **हेमा मिश्रा** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य** ;	10
[1977]	[1977] 4 उम. नि. प. 752 = (1976) 4 एस. सी. सी. 572 : **बालचंद जैन** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य** ।	12

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2020 की दांडिक अपील सं. 883.

2020 के जमानत आवेदन सं. 6981 में केरल उच्च न्यायालय, एर्नाकुलम न्यायपीठ के तारीख 2 नवम्बर, 2020 के निर्णय के विरुद्ध अपील ।

हाजिर होने वाले पक्षकारों की ओर से सर्वश्री हरीस बीरान, वी. चितम्बरेश, ज्येष्ठ काउंसेल, हर्षद वी. हमीद और जी. प्रकाश

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति (डा.) धनजंय वाई. चंद्रचूड़ ने

दिया ।

न्या. चंद्रचूड़ – इजाजत दी गई ।

2. यह अपील दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 438 के अधीन अग्रिम जमानत के लिए आवेदन को नामंजूर करते हुए केरल उच्च न्यायालय के विद्वान् एकल न्यायाधीश के निर्णय से उद्भूत हुई है । मूलत:, संविधान के अनुच्छेद 136 के अधीन विशेष इजाजत याचिका दो याचियों द्वारा फाइल की गई थी । प्रथम याची उस द्वितीय प्रत्यर्थी का पति है, जिसने शिकायत फाइल की थी और जिसके आधार पर प्रथम इत्तिला रिपोर्ट रजिस्ट्रीकृत की गई थी । द्वितीय याची प्रथम याची की माता है । इस न्यायालय के तारीख 2 दिसम्बर, 2020 के आदेश द्वारा प्रथम याची के द्वारा फाइल की गई विशेष इजाजत याचिका ग्रहण नहीं की गई थी और उसे सक्षम अधिकारिता के न्यायालय के समक्ष अभ्यर्पण करने और नियमित जमानत के लिए आवेदन करने के लिए समय प्रदान किया था ।

3. इस अपील में जो विवाद्यक विद्यमान है, वह यह है कि क्या उच्च न्यायालय ने अपीलार्थी (विशेष इजाजत याचिका, जैसी कि वह मूलत: फाइल की गई थी, में द्वितीय याची) द्वारा अग्रिम जमानत के लिए की गई प्रार्थना को अस्वीकार करके न्यायोचित किया था या नहीं । द्वितीय प्रत्यर्थी और अपीलार्थी के पुत्र के बीच तारीख 14 मई, 2016 को विवाह हुआ था । उनका एक बालक है जो मई, 2017 में पैदा हुआ था । द्वितीय प्रत्यर्थी ने तारीख 27 अगस्त, 2020 को भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 498-क और मुस्लिम स्त्री (विवाह अधिकार संरक्षण) अधिनियम, 2019 (जिसे इसमें आगे 'अधिनियम' कहा गया है) के उपबंधों के अधीन अपराधों की शिकायत करते हुए एक प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दी । तारीख 27 अगस्त, 2020 को यह प्रथम इत्तिला रिपोर्ट जो प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 908 थी, नार्थ परुर पुलिस थाना, जिला एर्नाकुलम ग्रामीण में दर्ज की गई । जहां तक इस अपील में संविवाद के लिए तात्विक बात का संबंध है, प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में यह अभिकथन किया गया है कि तारीख 5 दिसम्बर, 2019 को

लगभग 2.30 बजे अपराह्न में अपीलार्थी के पुत्र ने उनके मकान पर तीन बार तलाक का उच्चारण किया था । यह उल्लेख किया गया है कि इसके पश्चात् अपीलार्थी के पुत्र ने एक दूसरा विवाह कर लिया ।

4. दोनों याचियों द्वारा केरल उच्च न्यायालय में अग्रिम जमानत के लिए आवेदन किया गया । प्रथम आवेदन (2020 का जमानत आवेदन सं. 5748, आदेश तारीख 14 सितम्बर, 2020 (केरल उच्च न्यायालय) को स्पष्ट रूप से उचित अभिवचनों की कमी के कारण व्यपहृत कर लिया गया था । द्वितीय आवेदन (2020 का जमानत आवेदन स. 5944, आदेश तारीख 9 अक्तूबर, 2020 (केरल उच्च न्यायालय) पर, उच्च न्यायालय द्वारा यह अभिलिखित किया गया है कि इस पर जोर नहीं दिया गया था चूंकि शिकायतकर्ता और उसके पति के बीच समझौता होने की संभावना थी । चूंकि कोई समझौता नहीं हुआ, इसलिए अग्रिम जमानत मंजूर करने के लिए उच्च न्यायालय में समावेदन (2020 का जमानत सं. 6981) किया गया । उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश ने तारीख 2 नवम्बर, 2020 को अग्रिम जमानत से इनकार करते हुए यह मत व्यक्त किया :–

> "यदि अभियोजन का पक्षकथन सही है, तो प्रथम याची अब अपनी दूसरी पत्नी के साथ आनंद ले रहा है जबकि वास्तविक शिकायतकर्ता के साथ वैवाहिक संबंध अस्तित्व में है ।"

उच्च न्यायालय के आदेश में ऐसा कोई कारण अंतर्विष्ट नहीं है कि क्यों अपीलार्थी को अग्रिम जमानत से इंकार किया जा रहा है ।

5. हमने अपीलार्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल श्री हरीस बीरान, द्वितीय प्रत्यर्थी की ओर से विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री वी. चितम्बरेश के साथ विद्वान् काउंसेल श्री हर्षद वी. हमीद और केरल राज्य की ओर से विद्वान् काउंसेल श्री जी. प्रकाश को सुना ।

6. विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री वी. चितम्बरेश ने यह दलील दी कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 438 के अधीन अग्रिम जमानत मंजूर करने की न्यायालय की शक्ति को अधिनियम की धारा 7(ग) के उपबंध द्वारा छीन लिया गया है । इस दलील का विरोध करते हुए श्री हरीस बीरान ने

यह तर्क दिया कि अधिनियम की धारा 7(ग) में अग्रिम जमानत मंजूर करने की न्यायालय की शक्ति के प्रयोग पर कोई अभिव्यक्त प्रतिषेध नहीं है । हम यह उल्लेख करते हैं कि अपीलार्थी के काउंसेल ने अपनी दलील के समर्थन में **नहास** बनाम **केरल राज्य**[1] वाले मामले में केरल उच्च न्यायालय के तारीख 3 अगस्त, 2020 के निर्णय और आदेश का अवलंब लिया । इस न्यायालय को इस निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए इस दलील की गहराई से संवीक्षा करने की आवश्यकता है कि क्या धारा 7(ग) के उपबंध दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 438 के अधीन अग्रिम जमानत मंजूर करने से वर्जित करते हैं ।

7. अधिनियम की धारा 3 और 4 में निम्नलिखित उपबंधित है :–

> "3. तलाक का शून्य और अवैध होना – किसी मुस्लिम पति द्वारा अपनी पत्नी पर, या तो बोले गए या लिखे गए शब्दों द्वारा या इलैक्ट्रानिक रूप में या किसी प्रकार की किसी अन्य रीति में किया गया तलाक का कोई उच्चारण शून्य और अवैध होगा ।
>
> 4. तलाक के उच्चारण के लिए दंड – कोई मुस्लिम पति जो अपनी पत्नी पर धारा 3 में निर्दिष्ट तलाक का उच्चारण करता है तो उसे ऐसी अवधि के कारावास के लिए दंडित किया जाएगा जो तीन वर्ष तक की हो सकेगी और जुर्माने के लिए भी दायी होगा ।"

8. धारा 3 के अधीन, किसी मुस्लिम पति द्वारा अपनी पत्नी पर किए गए तलाक के उच्चारण को शून्य और अवैध बनाया गया है । धारा 4 के अधीन, कोई मुस्लिम पति जो अपनी पत्नी पर धारा 3 में यथा निर्दिष्ट तलाक का उच्चारण करता है, वह ऐसी अवधि के कारावास के लिए दंडनीय है जो तीन वर्ष तक की हो सकेगी । धारा 3 और 4 में का प्रतिषेध स्पष्ट रूप से ऐसा प्रतिषेध है जो केवल किसी मुस्लिम पति के संबंध में लागू होता है । इस बात का समर्थन मुस्लिम स्त्री (विवाह अधिकार संरक्षण) विधेयक 2019, जब इसे संसद् में पुर:स्थापित किया गया था, के उद्देश्यों और कारणों से होता है । इस विधेयक के

---

[1] 2019 का जमानत आवेदन सं. 9163, तारीख 3 अगस्त, 2020 को विनिश्चित ।

पुर:स्थापन के लिए दिए गए कारणों में विनिर्दिष्ट रूप से यह कहा गया है कि यह विधेयक **शायरा बानो** बनाम **भारत संघ**[1] वाले मामले में इस न्यायालय के विनिर्णय को प्रवृत्त करने के लिए और मुस्लिम पुरुषों द्वारा तलाक-ए-बिद्दत (तीन तलाक द्वारा विवाह-विच्छेद) की रुढ़िगत परिपाटी से मुस्लिम स्त्रियों को 'मुक्त' करने के लिए है । इसी पृष्ठभूमि में धारा 7 के उपबंधों का निर्वचन किया जाना होगा । धारा 7 निम्नलिखित प्रकार से है :–

> "7. अपराधों का संज्ञेय, शमनीय आदि होना – सिविल प्रक्रिया संहिता, 1973 में किसी बात के होते हुए भी, –
>
> (क) इस अधिनियम के अधीन दंडनीय अपराध संज्ञेय होगा, यदि अपराध के कारित होने से संबंधित जानकारी पुलिस थाने के भारसाधक अधिकारी को उस मुस्लिम स्त्री द्वारा या रक्त या विवाह द्वारा उससे संबंधित किसी व्यक्ति द्वारा दी जाती है जिस पर तलाक का उच्चारण किया गया है ;
>
> (ख) इस अधिनियम के अधीन दंडनीय अपराध मुस्लिम स्त्री, जिस पर तलाक का उच्चारण किया गया है, की प्रेरणा पर मजिस्ट्रेट की अनुज्ञा से उन निबंधनों और शर्तों पर शमनीय होगा, जो मजिस्ट्रेट अवधारित करे ;
>
> (ग) इस अधिनियम के अधीन दंडनीय अपराध के अभियुक्त व्यक्ति को तब तक जमानत पर नहीं छोड़ा जाएगा जब तक कि मजिस्ट्रेट का अभियुक्त द्वारा फाइल किए गए आवेदन पर और मुस्लिम स्त्री, जिस पर तलाक का उच्चारण किया गया है, को सुनने के पश्चात् यह समाधान नहीं हो जाता है कि ऐसे व्यक्ति को जमानत मंजूर करने के लिए युक्तियुक्त आधार हैं ।"

धारा 7(ग) के उपबंध मुस्लिम पति पर लागू होते हैं । अपराध जो धारा

---

[1] (2017) 9 एस. सी. सी. 1.

3 द्वारा सृजित होता है वह किसी मुस्लिम पति द्वारा अपनी पत्नी पर तलाक का उच्चारण करने पर सृजित होता है । धारा 3 में तलाक के उच्चारण को शून्य और अवैध बनाया गया है । धारा 4 में मुस्लिम पति के इस कृत्य को कारावास से दंडनीय बनाया गया है । इस प्रकार, प्राथमिक रूप से विश्लेषण करने पर यह स्पष्ट है कि अपीलार्थी द्वितीय प्रत्यर्थी की सास होने के नाते अधिनियम के अधीन तीन तलाक के उच्चारण के अपराध की अभियुक्त नहीं हो सकती है क्योंकि अपराध केवल किसी मुस्लिम पुरुष द्वारा कारित किया जा सकता है ।

9. यह मत व्यक्त करने के पश्चात् अब हम इस दलील पर विचार करेंगे कि अधिनियम की धारा 7(ग) में दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 438 के अधीन अग्रिम जमानत मंजूर करने की न्यायालय की शक्ति को वर्जित किया गया है । धारा 7 के खंड (ग) के अधीन संसद् ने यह उपबंध किया है कि किसी व्यक्ति को जो अधिनियम के अधीन दंडनीय अपराध का अभियुक्त है तब तक जमानत पर नहीं छोड़ा जाएगा जब तक कि अभियुक्त द्वारा फाइल किए गए आवेदन पर और मुस्लिम स्त्री जिस पर तलाक का उच्चारण किया गया है, को सुनने के पश्चात् मजिस्ट्रेट का यह समाधान नहीं हो जाता है कि जमानत मंजूर करने के लिए युक्तियुक्त आधार हैं ।

10. धारा 7 एक सर्वोपरि खंड से आरंभ होती है, जो दंड प्रक्रिया संहिता में "किसी बात के होते हुए भी" शब्दों से प्रवर्तित होती है । तथापि, इस बात पर बल देने के लिए समान रूप से यह भी आवश्यक है कि सर्वोपरि खंड केवल खंड (क), (ख) और (ग) के अंतर्गत आने वाले क्षेत्र में प्रवर्तित होता है । खंड (क) के अधीन, अपराध संज्ञेय है यदि अपराध के कारित होने की जानकारी पुलिस थाने के भारसाधक अधिकारी को विवाहित मुस्लिम स्त्री या रक्त अथवा विवाह से संबंधित किसी व्यक्ति द्वारा दी जाती है । खंड (ख) के अधीन, अपराध विवाहित मुस्लिम स्त्री, जिस पर तलाक का उच्चारण किया गया है, की प्रेरणा पर शमनीय है । तथापि, खंड (ख) में मजिस्ट्रेट की अनुज्ञा आवश्यक है । मजिस्ट्रेट शमन करने के लिए निबंधनों और शर्तों को विनिर्दिष्ट कर सकता है । आरंभतः, खंड (ग) "इस अधिनियम के अधीन दंडनीय

अपराध के अभियुक्त व्यक्ति को जमानत पर नहीं छोड़ा जाएगा" शब्दों से शुरु होती है । किंतु इसके पश्चात् क्या है वह भी समान रूप से आवश्यक है क्योंकि इससे पहले जो कहा गया है उस पर शर्तें लगाई गई हैं । दो शर्तें हैं । उनमें से एक प्रक्रियात्मक है जबकि दूसरी सारभूत है । पहली शर्त यह है कि मुस्लिम स्त्री, जिस पर तलाक का उच्चारण किया गया है, उसको सुना जाना आवश्यक है । पश्चात्वर्ती में न्यायालय को अपना यह समाधान किया जाना आवश्यक है कि उस व्यक्ति को जमानत मंजूर करने के लिए युक्तियुक्त आधार है । यह सारभूत शर्त उस बात की केवल एक मान्यता है जो जमानत मंजूर करने के लिए न्यायिक शक्ति में विवक्षित है । कोई न्यायालय तब तक जमानत मंजूर नहीं करेगा जब तक कि जमानत मंजूर करने के लिए युक्तियुक्त आधार न हों । सभी न्यायिक विवेकाधिकार का प्रयोग युक्तियुक्त आधारों पर किया जाना चाहिए । इसलिए खंड (ग) में की सारभूत शर्त न्यायालय को जमानत मंजूर करने की अपनी शक्ति से वंचित नहीं करती है । संसद् ने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 438 के उपबंधों को अध्यारोहित नहीं किया है । धारा 7(ग) या अधिनियम मे कहीं भी ऐसा कोई विनिर्दिष्ट उपबंध नहीं है जो धारा 438 को अधिनियम के अधीन दंडनीय अपराध के लिए अप्रयोज्य बनाता हो । न्यायालय की जमानत मंजूर करने की शक्ति सभी मामलों में निर्दोषिता की उपधारणा करने (जहां अभी विचारण और दोषसिद्धि की जानी है) और दैहिक स्वतंत्रता के महत्व की मान्यता है । स्वतंत्रता को, निस्संदेह, विधि द्वारा विनियमित किया जा सकता है जो अनुच्छेद 21 के अधीन सारभूत रूप से और प्रक्रियात्मक रूप से उचित, न्यायसंगत और युक्तियुक्त हो । **हेमा मिश्रा** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय ने निराधार आरोपों के कारण किसी व्यक्ति की स्वतंत्रता को संकट में पड़ने से बचाने के लिए किसी सांविधानिक न्यायालय द्वारा आदेश देने की बात पर बल दिया है । इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि यहां तक कि कोई रिट न्यायालय अग्रिम जमानत मंजूर करने के लिए, ऐसी राहत मंजूर करने के विरुद्ध अधिरोपित किसी कानूनी वर्जन के बावजूद, सशक्त है ।

---

[1] (2014) 4 एस. सी. सी. 453.

11. कानूनी पाठ से यह उपदर्शित होता है कि धारा 7(ग) जमानत मंजूर करने पर आत्यंतिक वर्जन अधिरोपित नहीं करती है । इसके विपरीत, मजिस्ट्रेट, यदि उसका यह समाधान हो जाता है कि "ऐसे व्यक्ति की जमानत मंजूर करने के लिए युक्तियुक्त आधार हैं" और विवाहित मुस्लिम स्त्री, जिस पर तलाक का उच्चारण किया गया है, को सुने जाने की अपेक्षा का पालन करने के उपरांत जमानत मंजूर कर सकेगा । इसलिए, यद्यपि, धारा 7 एक सर्वोपरि खंड से आरंभ होती है जो दंड प्रक्रिया संहिता के संबंध में लागू होता है, तो भी धारा 7(ग) के एक स्पष्ट अर्थान्वयन से यह उपदर्शित होता है कि यह धारा जमानत मंजूर करने की मजिस्ट्रेट की शक्ति पर कोई रुकावट अधिरोपित नहीं करती है, सिवाय इस शर्त के कि ऐसा करने से पूर्व विवाहित मुस्लिम स्त्री, जिस पर तलाक का उच्चारण किया गया है, को अवश्य सुना जाए और उस व्यक्ति को जमानत मंजूर करने के लिए युक्तियुक्त आधार विद्यमान होने के बारे में मजिस्ट्रेट का समाधान हो जाना चाहिए । इससे यह विवक्षित है कि अधिनियम के अधीन अपराध के लिए अग्रिम जमानत मंजूर करने के लिए आवेदन को ग्रहण करते समय सक्षम न्यायालय को उस विवाहित मुस्लिम स्त्री को भी जिसने शिकायत की है, अवश्य सुना जाना चाहिए जैसा कि अधिनियम की धारा 7(ग) के अधीन विहित किया गया है । विवाहित मुस्लिम स्त्री को सुनने के पश्चात् ही सक्षम न्यायालय अभियुक्त को जमानत मंजूर कर सकता है ।

12. उपरोक्त निर्वचन इस तथ्य से सुदृढ़ हो जाता है कि विधान-मंडल ने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 438 के उपयोजन को अभिव्यक्त रूप से वर्जित नहीं किया है । इस संदर्भ में, **बालचंद जैन** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय के एक पूर्ववर्ती विनिश्चय को निर्दिष्ट करना उपयोगी होगा । इस न्यायालय की एक तीन न्यायाधीशों की न्यायपीठ को भारत की रक्षा और आंतरिक सुरक्षा नियम, 1971 के नियम 184 का निर्वचन करना था, जिसमें निम्नलिखित उपबंध किया गया है :–

---

[1] [1977] 4 उम. नि. प. 752 = (1976) 4 एस. सी. सी. 572.

"नियम 184. दंड प्रक्रिया संहिता 1898 (1898 का 5) में किसी बात के होते हुए भी, इन नियमों या तद्धीन दिए गए आदेश के उल्लंघन के लिए अभियुक्त या सिद्धदोष व्यक्ति को, यदि वह अभिरक्षा में हो, जमानत पर या स्वयं उसके बंधपत्र पर तब तक नहीं छोड़ा जाएगा जब तक कि –

(क) ऐसे छोड़े जाने के लिए आवेदन का विरोध करने का अवसर अभियोजन पक्ष को न दिया गया हो, और

(ख) जहां अभियोजन पक्ष आवेदन का विरोध करता हो और उल्लंघन इन नियमों या तद्धीन दिए गए आदेशों को किसी ऐसे उपबंध का हो, जिसे केंद्रीय सरकार या राज्य सरकार इस निमित्त अधिसूचित आदेश द्वारा विनिर्दिष्ट करे, वहां न्यायालय का यह समाधान न हो गया हो कि यह विश्वास करने के लिए युक्तियुक्त आधार हैं कि वह ऐसे उल्लंघन का दोषी नहीं है ।"

इस न्यायालय के समक्ष विवाद्यक यह था कि नियम 184 के अंतर्गत आने वाले अभिकथित अपराध के मामले में सेशन न्यायालय अथवा उच्च न्यायालय द्वारा अग्रिम जमानत का आदेश दिया जा सकता है या नहीं । इस न्यायालय ने न्यायमूर्ति पी. एन. भगवती (जैसे कि वह उस समय थे) के माध्यम से निर्णय सुनाते हुए यह अभिनिर्धारित किया :–

"3. ..... नियम 184 का परिशीलन इस रूप में करना संभव नहीं है कि उसमें किसी ऐसे व्यक्ति के मामले में जो कि किसी नियम या उक्त नियम के अधीन दिए गए आदेश के उल्लंघन का अभियुक्त या सिद्धदोष व्यक्ति है, जमानत मंजूर करने के लिए एक स्वत: पूर्ण संहिता अधिकथित की गई है जिससे कि ऐसे मामले में जमानत मंजूर करने की शक्ति केवल नियम 184 में ही पाई जाती हो, न कि दंड प्रक्रिया संहिता में । नियम 184 का अर्थान्वयन इस प्रकार नहीं किया जा सकता कि उसके द्वारा ऐसे व्यक्ति के मामले में, जिसे किसी नियम या उक्त नियमों के अधीन दिए गए किसी आदेश के उल्लंघन का अभियुक्त या सिद्धदोष व्यक्ति ठहराया गया

हो, जमानत मंजूर करने के बारे में दंड प्रक्रिया संहिता के उपबंधों को सर्वथा विस्थापित कर दिया गया हो । दंड प्रक्रिया संहिता के ये उपबंध निश्चित रूप से नियम 184 के साथ-साथ पढ़े जाने चाहिए और उन्हें पूर्ण रूप से प्रभावशील बनाना चाहिए, सिवाय वहां के जहां कि नियम 184 द्वारा सर्वोपरि खंड के परिणामस्वरूप उसे अध्यारोहित कर दिया गया है ।"

इस न्यायालय ने नियम 184 और दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 438 का सामंजस्यपूर्ण अर्थान्वयन किया और यह अभिनिर्धारित किया :–

"4. .... इस प्रकार धारा 438 और नियम 184 भिन्न-भिन्न प्रक्रमों पर प्रवर्तित होते हैं । इनमें से एक गिरफ्तारी से पूर्व और दूसरा गिरफ्तारी के पश्चात् लागू होता है और इन दोनों उपबंधों के बीच कोई अतिव्याप्ति विद्यमान नहीं है जिससे कि इनमें विरोध पैदा हो सके और परिणामतः, आवश्यक सहज परिणाम के रूप में यह निष्कर्ष निकलता है कि नियम 184 सेशन न्यायालय अथवा उच्च न्यायालय द्वारा किसी ऐसे व्यक्ति को धारा 438 के अधीन अग्रिम जमानत मंजूर करने के रास्ते में रुकावट नहीं डालता है जिसे यह आशंका हो कि उस पर किसी नियम या उसके अधीन दिए गए आदेश के उल्लंघन संबंधी अभियोजन लगाया जाएगा ।

5. किंतु भले ही नियम 184 ऐसे मामले में लागू नहीं होता है तो भी न्यायालय को धारा 438 के अधीन अग्रिम जमानत मंजूर करने की अपनी शक्ति का प्रयोग करते समय अपने मन में उस नीति को रखना होगा जो कि इस नियम के पीछे विद्यमान है । ..... जब कोई व्यक्ति किसी नियम या उस नियम के अधीन दिए गए आदेश का उल्लंघन करने के अभियोग के आधार पर गिरफ्तार किए जाने की आशंका करते हुए न्यायालय को धारा 438 के अधीन निदेश के लिए आवेदन प्रस्तुत करता है, तो न्यायालय को साधारणतया उक्त धारा के अधीन तब तक अग्रिम जमानत मंजूर नहीं करनी चाहिए जब तक कि अभियोजन पक्ष को यह सूचना न दे दी गई हो जिसके द्वारा उसे उस आवेदन का विरोध करने का

अवसर मिल गया हो और यदि उल्लंघन ऐसे नियम का अथवा ऐसे आदेश का है जो कि विशेष रूप से इस निमित्त अधिसूचित किया गया है तो न्यायालय का यह समाधान हो गया हो कि यह विश्वास करने के लिए युक्तियुक्त आधार हैं कि वह ऐसे उल्लंघन का दोषी नहीं है ....।"

न्यायमूर्ति फजल अली ने अपनी सम्मत राय में यह अभिनिर्धारित किया कि उपरोक्त मत कानूनों में सर्वोपरि खंड के निर्वचन के लिए लागू सिद्धांतों के अनुरुप है । विद्वान् न्यायाधीश ने यह मत व्यक्त किया :–

"15. ..... अब यदि विधान-मंडल का आशय यह होता कि धारा 438 के उपबंध नियम 184 के अंतर्गत आने वाले मामलों को लागू नहीं होने चाहिए, तो यह कहना कठिन है कि भला विधान-मंडल ने अभिव्यक्त रूप से नियम 184 को क्यों व्यावृत्त कर लिया था जो कि पहले से ही उस समय विद्यमान था जब 1973 की नई संहिता अधिनियमित की गई थी और नियम 184 को धारा 438 की परिधि में से अपवाद के रूप में क्यों रखा था । <u>दूसरे शब्दों में, यदि नियमों के नियम 184 के उपबंध का आशय यह होता कि संहिता की धारा 438 के उपबंधों का अध्यारोहित किया जाए, तो विधान-मंडल को अभिव्यक्त रूप से भली-भांति यह उल्लेख करना चाहिए था कि संहिता की धारा 438 के उपबंध नियमों के नियम 184 द्वारा अनुध्यात अपराधों को लागू नहीं होंगे ।</u> तथापि, संहिता में ऐसा कोई उपबंध नहीं है । अत: इन परिस्थितियों में, विधान-मंडल ने अपने विवेकानुसार यह बात न्यायालय पर छोड़ दी थी कि वह इन दोनों कानूनों के बीच सामंजस्यपूर्ण अर्थान्वयन करे जिससे कि दोनों एक साथ कृत्यशील हो और मिलकर कार्य कर सकें । यह पूर्ण रूप से कानूनों में विद्यमान सर्वोपरि खंडों का अर्थान्वयन करने में इस न्यायालय द्वारा अधिकथित किए गए सिद्धांतों के भी अनुरुप है .....।"

(बल देने के लिए रेखांकन किया गया है)

13. कतिपय अन्य कानूनों में अभिव्यक्त रूप से दंड प्रक्रिया

संहिता की धारा 438 को अपवर्जित किया गया है । अधिनियम की धारा 7(ग) के उपबंधों को अवश्य ही उन उपबंधों से सुभिन्न किया जाना चाहिए जो ऐसे कानूनों में अंतर्विष्ट हैं । उदाहरण के लिए, महाराष्ट्र संगठित अपराध नियंत्रण अधिनियम, 1999 [महाराष्ट्र कंट्रोल ऑफ आर्गेनाइज्ड क्राइम ऐक्ट (मकोका)] में दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 438 लागू होने के लिए स्पष्ट रूप से अपवर्जित किया गया है । मकोका की धारा 21(3) में यह अनुबंधित है :–

> "3. संहिता की धारा 438 की कोई बात इस अधिनियम के अधीन दंडनीय अपराध करने के अभियोग पर किसी व्यक्ति की गिरफ्तारी के किसी मामले के संबंध में लागू नहीं होगी ।"

14. अनुसूचित जातियां और अनुसूचित जनजातियां (अत्याचार निवारण) अधिनियम, 1989 में भी इसी प्रकार के उपबंध हैं जिनमें दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 438 का लागू होना अपवर्जित किया गया है । धारा 18 और 18-क निम्नलिखित प्रकार से हैं :–

> "18. अधिनियम के अधीन अपराध करने वाले व्यक्तियों को संहिता की धारा 438 लागू न होना – संहिता की धारा 438 की कोई बात इस अधिनियम के अधीन कोई अपराध करने के अभियोग पर किसी व्यक्ति की गिरफ्तारी के किसी मामले के संबंध में लागू नहीं होगी ।
>
> 18-क. कोई जांच या अनुमोदन अपेक्षित न होना – (1) इस अधिनियम के प्रयोजनों के लिए –
>
> (क) किसी व्यक्ति के विरुद्ध प्रथम इत्तिला रिपोर्ट के रजिस्ट्रीकरण के लिए आरंभिक जांच करना अपेक्षित नहीं होगा ; या
>
> (ख) अन्वेषक अधिकारी के लिए ऐसे किसी व्यक्ति की गिरफ्तारी के लिए, यदि आवश्यक हो, जिसके विरुद्ध इस अधिनियम के अधीन अपराध करने का अभियोग लगाया गया है, अनुमोदन अपेक्षित नहीं होगा और इस अधिनियम या

संहिता के अधीन उपबंधित से भिन्न कोई प्रक्रिया लागू नहीं होगी ।

(2) इस अधिनियम के अधीन किसी मामले को संहिता की धारा 438 के उपबंध किसी न्यायालय का कोई निर्णय या आदेश या निदेश होते हुए भी लागू नहीं होंगे ।"

15. धारा 18 में अधिनियम के अधीन कोई अपराध करने के अभियोग पर किसी व्यक्ति की गिरफ्तारी के किसी मामले के संबंध में दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 438 का लागू होना स्पष्ट रूप से अपवर्जित किया गया है । धारा 18-क की उपधारा (2) में दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 438 के उपबंधों का लागू होना, किसी न्यायालय के किसी निर्णय, आदेश या निदेश के होते हुए भी, विनिर्दिष्ट रूप से अपवर्जित किया गया है । **पृथ्वी राज चौहान** बनाम **भारत संघ और अन्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय की एक तीन न्यायाधीशों की न्यायपीठ द्वारा धारा 18 और 18-क के उपबंधों का निर्वचन किया गया था । न्यायमूर्ति अरुण मिश्रा ने अपनी ओर से और न्यायमूर्ति विनीत सरन की ओर से इन उपबंधों का अर्थान्वयन करते हुए यह मत व्यक्त किया कि :–

"11. जहां तक दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 438 के उपबंधों के लागू होने का संबंध है, ये उपबंध 1989 के अधिनियम के अधीन मामलों को लागू नहीं होंगे । तथापि, यदि शिकायत से 1989 के अधिनियम के उपबंधों को लागू करने के लिए प्रथमदृष्ट्या मामला नहीं बनता है, तो धारा 18 और 18-क(i) द्वारा सृजित वर्जन लागू नहीं होगा । हमने इस पहलू को पुनर्विलोकन याचिकाओं का विनिश्चय करते समय स्पष्ट किया है ।"

16. न्यायमूर्ति एस. रविन्द्र भट के सम्मत निर्णय में इस प्रकार का दृष्टिकोण निम्नलिखित मत व्यक्त करते हुए अपनाया गया है :–

"32. जहां तक धारा 18-क और अग्रिम जमानत के उपबंध का संबंध है, न्यायमूर्ति मिश्रा के निर्णय में यह कहा गया है कि

---

[1] (2020) 4 एस. सी. सी. 727.

उन मामलों में जहां किसी शिकायत के आधार पर गिरफ्तारी करने के लिए कोई प्रथमदृष्ट्या सामग्री विद्यमान न हो, वहां न्यायालय को गिरफ्तारी-पूर्व जमानत का निदेश देने की अंतर्निहित शक्ति है ।"

17. इस प्रकार अनुसूचित जातियां और अनुसूचित जनजातियां (अत्याचार निवारण) अधिनियम, 1989 जैसे विधान के संदर्भ में भी, जहां धारा 18 और धारा 18-क की उपधारा (2) के उपबंधों द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 438 के लागू होने पर वर्जन सन्निविष्ट किया गया है, इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया था कि यह वर्जन वहां लागू नहीं होगा जहां शिकायत से अधिनियम के उपबंधों के लागू होने के लिए "एक प्रथमदृष्ट्या मामला" नहीं बनता है । जमानत के लिए उपचारों तक पहुंच के अधिकार के कानूनी अपवर्जन का कड़ाईपूर्वक अर्थान्वयन किसी प्रयोजन के लिए किया जाता है । एक उपचार के रूप में जमानत तक पहुंच को अपवर्जित करने से मानव की स्वाधीनता का अतिक्रमण होता है । इसलिए **चौहान** (उपर्युक्त) वाले मामले में के विनिश्चय में यह अभिनिर्धारित किया गया था कि यह अपवर्जन वहां लागू नहीं होगा जहां शिकायत से प्रथमदृष्ट्या अनुसूचित जातियां और अनुसूचित जनजातियां (अत्याचार निवारण) अधिनियम, 1989 के उपबंधों को लागू करने के लिए मामला उपदर्शित नहीं होता है ।

18. उपरोक्त कारणों से, हम इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 438 और अधिनियम की धारा 7(ग) का सही और सामजंस्यपूर्ण अर्थान्वयन करने पर अधिनियम के अधीन कारित किए गए अपराध के लिए अग्रिम जमानत मंजूर करने पर कोई वर्जन नहीं है परंतु सक्षम न्यायालय द्वारा विवाहित मुस्लिम स्त्री को जिसने अग्रिम जमानत मंजूर करने से पूर्व शिकायत की थी, अवश्य सुना जाना चाहिए और विवाहित मुस्लिम स्त्री को सूचना जारी करने के पश्चात् अग्रिम जमानत के लिए आवेदन के लंबित रहने के दौरान अभियुक्त को अंतरिम राहत मंजूर करना न्यायालय का विवेकाधिकार होगा ।

19. इस न्यायालय के तारीख 3 दिसम्बर, 2020 के आदेश द्वारा

अपीलार्थी को गिरफ्तारी से अंतरिम संरक्षण प्रदान किया गया था । प्राथमिक अभिकथन, जिस पर अग्रिम जमानत से इनकार करने के लिए बल दिया गया है, द्वितीय प्रत्यर्थी के पति द्वारा तीन तलाक का उच्चारण करने का है । पूर्ववर्ती पैराओं में हमने यह मत व्यक्त किया है कि अधिनियम के अधीन अपराध मुस्लिम पुरुष, जिसने अपनी पत्नी पर तलाक का उच्चारण किया था, द्वारा किया गया था न कि अपीलार्थी द्वारा जो कि द्वितीय प्रत्यर्थी की सास है । यद्यपि, केरल राज्य की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल श्री जी. प्रकाश ने जमानत मंजूर करने का विरोध करने के लिए दंड संहिता की धारा 498-क के अधीन अभिकथनों का उल्लेख किया, तो भी हमारा यह मत है कि प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में इन अभिकथनों की, ब्यौरों से रहित, अस्पष्ट और साधारण प्रकृति को ध्यान में रखते हुए अपीलार्थी (जिसके पुत्र का द्वितीय प्रत्यर्थी के साथ दाम्पत्य संबंध है) को अग्रिम जमानत मंजूर करने के फायदे से इनकार नहीं किया जाना चाहिए । यह भी उल्लेख किया जाना आवश्यक है कि न्यायिक मजिस्ट्रेट, प्रथम श्रेणी-1, उत्तर पारुर ने तारीख 23 अक्तूबर, 2020 के आदेश द्वारा घरेलू हिंसा से स्त्रियों का संरक्षण अधिनियम, 2005 की धारा 23 के अधीन द्वितीय प्रत्यर्थी के आवेदन का विनिश्चय करते हुए अपीलार्थी के विरुद्ध अभिकथनों में कोई सार नहीं पाया था ।

20. तद्नुसार, हम यह आदेश और निदेश देते हैं कि अपीलार्थी को गिरफ्तार करने की दशा में उसे सक्षम न्यायालय द्वारा, उसके द्वारा 25,000/- रुपए का स्वीय बंधपत्र फाइल करने के अध्यधीन, जमानत पर छोड़ दिया जाएगा । अपीलार्थी अन्वेषक अधिकारी द्वारा अन्वेषण करने के दौरान सहयोग करेगी ।

21. यह अपील उपरोक्त निबंधनों के अनुसार मंजूर की जाती है ।

22. लंबित आवेदन, यदि कोई है, का निपटारा हो जाता है ।

अपील मंजूर की गई ।

जस.